International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Volume 02, No. 01, January - March, 2020, pp.193-196

समकालीन भारतीय दृष्टिकोण में गाँधी जी का मानवाधिकारवादी दर्शन

प्रो. (डॉ.) कर्ण सिंह*
सरोज मीना**

परिचय

गाँधीजी के चिंतन की विशिष्ट प्रकृति है जिसे समकालीन चिंतन की किसी धारा में समाहित नहीं किया जा सकता। गाँधी जी के विचार न तो उदारवादी, न मार्क्सवादी और न ही समुदायवादी है बल्कि इन सभी चिंतन धाराओं से आगे बढ़कर वे मानववाद दर्शन का सूत्रपात करते हैं। वे कर्तव्य परायण व्यक्ति की अस्मिता व स्वातंत्र्य सुरक्षित करने की बात करते हैं। गाँधीजी का मानववादी दर्शन व्यक्ति स्वातंत्र्य व अस्मिता का संरक्षण करते हुए राजनीति को धर्म, सत्य व अहिंसा से जोड़ने का ऐसा प्रयास है जिससे राजनीति आत्मसाक्षात्कार का एक महत्वपूर्ण साधन बन जाए।

उदारवाद व व्यक्तिवाद ने व्यक्ति को उसके हितों के संदर्भ में परिभाषित करते हुए व्यक्ति को साध्य माना है। बेंथम ने व्यक्ति के हितों को अंतःचेतना का स्थान दे दिया। इसी क्रम में उपयोगितावादी अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख की वकालत करते हुए गुण के स्थान पर मात्रा को प्राथमिकता देते हैं। इस व्यक्ति केंद्रित चिंतन के विरुद्ध आदर्शवादी विचारधारा ने व्यक्ति की स्वतंत्रता व नैतिकता को राज्य पर निर्भर बना दिया, तो वहीं समाजवाद ने मनुष्य तथा उसके श्रम को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया तथा इस प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के लिए वर्तमान संस्थागत ढांचे में परिवर्तन करने की आवश्यकता पर बल दिया।

मार्क्स एक ऐसे प्रमुख चिंतक थे जिन्होंने मनुष्य की स्वतंत्रता को उस समय तक स्थगित करने की बात कही जब तक वर्तमान शोषणकारी व आधिपत्यकारी पूंजीवादी व्यवस्था का अंत नहीं हो जाता। वहीं गाँधीजी ने इन सबसे अलग माना कि मानववाद में व्यक्ति की स्वतंत्रता न तो संस्थाओं पर निर्भर करती है और न ही भौतिकता से संचालित होती है। गाँधीजी ने व्यक्ति को सम्मान का पात्र इसलिए माना कि उसमें सत्य को आत्मसात करने की, अहिंसा पर चलने व धर्म का निर्वाह करने की पूर्ण क्षमता है। गाँधीजी व्यक्ति को अधिकारों के धारक के रूप में नहीं वरन् अधिकारों के निर्माता के रूप में देखते थे। गाँधीजी की दृष्टि में मानव अधिकार उसके कर्तव्यों के अनुगामी है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने मानवीय कर्तव्यों का पालन करे तो उसके अधिकार स्वमेव संपुष्ट हो जाएँगे।

गाँधीजी के मानवाधिकार की दार्शनिक पृष्ठभूमि सत्य, अहिंसा व धर्म पर आधारित है। सत्य, अहिंसा व धर्म मानव की वैयक्तिक स्वार्थपरक विचारों से ऊपर उठाकर समाज व समूह के हित से संबद्ध कर देता है। गाँधीजी ने प्रस्थापित किया कि मनुष्य में निहित नैतिकता और सत्य के प्रति निष्ठा का संयोग जब अहिंसात्मक व्यवहार से होता है, तब व्यक्ति मानव धर्म का पालन करता है, इसका प्रभाव व्यक्ति के अंतःसंबधों का मिश्रण है अतएव उसमें आवेश, संवेग व उद्वेग आदि का होना स्वाभाविक है लेकिन आध्यात्म पक्ष प्रधानता से व्यक्ति में शुभत्व को जाग्रत किया जा सकता है और अपूर्ण मानव व मानवता को पूर्णता की ओर अग्रसर किया जा सकता है। गाँधीजी का विश्वास था कि यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यों का समुचित पालन करे तो सामाजिक समरसता के साथ–साथ अधिकार भी प्रतिफलित होंगे।

गाँधीजी के चिंतन में अधिकार कर्तव्यों से संबंधित है। उन्होंने कर्तव्यों को अधिकारों का स्त्रोत बताया। गाँधीजी ने गीता के निष्काम कर्मयोग की नयी व्याख्या की। वे इच्छा की स्वतंत्रता पर बल देते हैं और कहते हैं कि व्यक्ति द्वारा किया गया कोई भी कार्य नैतिक नहीं हो सकता यदि वह स्वैच्छिक नहीं हो। अतः नैतिक कार्य

* शोध निदेशक, राजनीति विज्ञान विभाग, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान।
** शोधार्थी, राजनीति विज्ञान, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान।

का प्रथम आधार यह है कि वह स्वैच्छिक हो और नैतिक इच्छाओं से प्रेरित हो। साधन की पवित्रता अपेक्षित है वे ही साध्य पवित्र माने जाएँगे जिनकी प्राप्ति हेतु पवित्र साधन अपनाये गये हों। गाँधीजी के अनुसार कोई भी कार्य तब नैतिक माना जाएगा जब अहम् के भाव से मुक्त हो और निस्वार्थ इच्छा पर आधारित हो एवं सर्वजनहिताय की कामना से युक्त हो।

गाँधीजी के अनुसार मानवीय उत्तरदायित्व मानवीय कर्तव्य से संबंधित है और उसका मानवीय क्षमता के अनुरूप अनुपालन से ही मानवाधिकार का जन्म होता है। गाँधीजी का मानना था कि यदि व्यक्ति मानवाधिकार प्राप्त करना चाहता है तो उसे उन कर्तव्यों का पालन करना होगा जिससे अधिकार प्रस्फुटित होते हैं। गाँधीजी व्यक्ति के कर्तव्य व दायित्व पर बल देने के साथ व्यक्ति की अस्मिता और गरिमा को संरक्षित करने हेतु व्यक्ति की स्वातंत्र्य पर बल देते हैं। मानवाधिकार प्राप्ति हेतु व्यक्ति का कर्तव्यपरायण होना आवश्यक है और स्वतंत्र व्यक्ति कर्तव्यपरायण हो सकते हैं। गाँधीजी की स्वतंत्रता व्यक्ति के मध्य तथा व्यक्ति व प्रकृति के मध्य एकता में प्रतिफलित होती है। गाँधीजी की स्वतंत्रता संबंधी संकल्पना नैतिकता पर आधारित है। व्यक्ति की स्वतंत्रता मर्यादित व नैतिक होनी चाहिए जिससे नैतिक सामाजिक व्यवस्था बनी रहे।

गाँधीजी ने स्थापित करने का प्रयास किया कि उद्विकासीय संरचना में व्यक्ति के विकास के जो चरण होंगे वे समस्त स्तरों से गुजरते हुए सार्वभौमिक विकास की दशाओं के अनुरूप व्यक्तिगत विकास को सुनिश्चित करेंगे। इस प्रकार संपूर्ण का संतुलित व स्वतंत्र विकास हो पायेगा। स्वतंत्रता ऐसी नैतिक शक्ति व नैतिक अधिकार है जिसके द्वारा समाज का नैतिक विकास संभव है। इसके द्वारा समाज के वर्तमान ढांचे में परिवर्तन लाया जा सकता है। गाँधीजी के अनुसार व्यक्ति की स्वतंत्रता सिर्फ व्यक्ति के विकास के लिए नहीं वरन् संपूर्ण समाज के विकास के लिए अपरिहार्य है जिसमें व्यक्ति का विकास अंतर्निहित हैं। गाँधीवादी अवधारणा मानवतावादी चिंतन पर आयामों के निकट है जिनमें राज्य के न्यूनतम हस्तक्षेप और व्यक्ति के अधिकतम समग्र विकास के लिए अधिकतम अवसरों की उपलब्धता की बात कही। गाँधीजी के चिंतन में स्वतंत्रता व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा नहीं वरन् एक सामाजिक आवश्यकता है।

गाँधीजी मनुष्य की क्षमताओं के समग्र विकास के लिए स्वतंत्रता की भांति समानता को भी अपरिहार्य मानते हैं। गाँधीजी की स्वतंत्रता की अवधारणा में समानता की अवधारणा अंतर्निहित है क्योंकि समानताविहीन स्वतंत्रता मूल्यहीन हो जाती है। गाँधी समानता के उस आधारभूत तत्व के पक्षधर थे जो पारस्परिक प्रेम, सहयोग, दया आदि पर निर्भर हो, उनके अनुसार किसी पर किसी का वर्चस्व नहीं होना चाहिए। एक व्यक्ति के रूप में प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से समानता का अधिकार रखता है। गाँधी प्रत्येक मनुष्य के प्रति आत्मवत प्रेम की आवश्यकता पर बल देते थे। उनका मानना था कि आत्मवत् प्रेम का मूल आधार जाति, धर्म, वर्ण, संप्रदाय, लिंग भेद आदि से मुक्त प्रेम है। गाँधी ने यह विचार स्थापित किया कि इस मानव समाज में जाति, प्रजाति या वर्ण में निहित असमानताओं को दूर किया जाना चाहिए तथा इस आधार पर किसी व्यक्ति को दूसरे की तुलना में असमान स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए।

गाँधी आर्थिक समानता का विचार देते हुए कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति से उसकी क्षमता के अनुरूप कार्य लिया जाये और उसकी आवश्यकतानुसार उसे दिया जाए। गाँधी का मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति के पास रहने के लिए मकान, पहनने के लिए वस्त्र और भोजन के लिए पर्याप्त अन्न होना चाहिए। इस प्रकार गाँधी समानता के माध्यम से समाजिक न्याय की बात करना चाहते थे, उनका मानवतावादी चिंतन एक ऐसे समाज की कल्पना करता है जहाँ समाज का सबसे अंतिम व्यक्ति भी एक सम्मानपूर्ण व प्रतिष्ठापरक जीवन व्यक्ति कर सके।

गाँधी भौतिक आववश्यकताओं को सीमित कर न्यायपूर्ण समाज की स्थापना की बात करते हैं चूँकि सीमित भौतिक आवश्यकताओं से गरिमापूर्ण जीवन व्यतीत किया जा सकता है। अतः जो कुछ भी व्यक्ति के पास आवश्यकता से अधिक है उसे समाज के कल्याण के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिए।

इस प्रकार गाँधी का मानवाअधिकारवादी दर्शन उस सर्वोदय की कामना करता है जहाँ मानवीय संबंध सत्य, अहिंसा और धर्म पर आधारित होंगे और सभी की क्षमताओं का पूर्ण विकास व सदुपयोग होगा। सर्वोदय बहुसंख्यक के कल्याण की नहीं वरन् सबके कल्याण की बात करता है। वे चाहते थे कि सबका सह विकास हो, सबका सब प्रकार से उत्थान हो। गाँधी का सर्वोदयी दर्शन अहिंसा पर आधारित ऐसी सामाजिक संरचना की बात करता है जहाँ व्यक्ति और समाज एक–दूसरे के पूरक होंगे और दोनों समन्वित रूप से एक आदर्श राज्य की स्थापना करेंगे।

पूर्ण स्वराज्य की बात करते हुए गाँधी कहते हैं कि वह जितना किसी राजा के लिए होगा, उतना ही किसानों के लिए, जितना धनवान जमींदार के लिए होगा, उतना ही खेतिहर मजदूर के लिए, उतना ही हिन्दुओं के लिए होगा, उतना मुसलमानों के लिए जितना जैन, यहूदी, सिख, इसाईयों के लिए। उसमें जाति–पाँति, धर्म अथवा दर्जे का भेदभाव के लिए कोई स्थान नहीं होगा। गाँधी अपने मानवतावादी चिंतन में विचार देते है कि कोई भी अस्पृश्य पैदा नहीं होता। मानव प्राणियों को जन्म से अस्पृश्य मानना गलत है। गाँधीजी ने चरखे को अपने सर्वोदयी मानवाधिकारवादी दर्शन के प्रतीक के रूप में मानते हुए कहा कि चरखे का संदेश उसकी परिधि से कहीं ज्यादा व्यापक है। उसका संदेश सादगी, मानव सेवा, अहिंसामय जीवन तथा गरीब और अमीर, पूंजी और धर्म, राज्य और किसान के बीच अविच्छेद संबंध स्थापित करने का संदेश है।

इसी प्रकार गाँधी मानवाधिकार के वृहद् आयाम के सम्पुष्ट करते हैं। गाँधीजी एक ऐसी शासन व्यवस्था की कल्पना करते हैं जहाँ सबल व निर्बल दोनों को समान अवसर मिल सके। सांप्रदायिकता को समाज की शांति और सह–अस्तित्व के लिए घातक मानते हुए, हिंदू–मुस्लिम एकता पर बल दिया। गाँधी के अनुसार साम्प्रदायिकता का विचार मानव–मानव के बीच, धर्म–धर्म के बीच और वर्ग–वर्ग के बीच गहरी खाई पैदा करता है इसलिए वे हिन्दू–मुस्लिम एकता से ही राष्ट्र के विकास की बात करते थे। वे कहते थे कि ये दोनों संस्कृति मिलकर राष्ट्र के निर्माण में सहायक सिद्ध होंगे।

गाँधीजी अपने विचारों में लोकतांत्रिक शासन पद्धति की विकेन्द्रित व्यवस्था पर बल देते हुए ग्रामीण गणतंत्रों की संघीय व्यवस्था की स्थापना पर जोर देते हैं। वे लोकतंत्र में संपूर्ण व्यक्तियों के अधिकतम हित की अपेक्षा करते हैं। गाँधी की लोकतंत्र की अवधारणा में मानवीय हित निहित है गाँधी ऐसे लोकतंत्र की कामना करते हैं जिसमें त्याग, सेवा व समर्पण आदि मानवीय मूल्य निहित हो। उनके अनुसार लोकतांत्रिक व्यवस्था में शासन करने वाला त्याग और सेवा भाव की भावना से पूर्ण होगा, तभी वह मानव जाति का कल्याण करेगा और ऐसी व्यवस्था में ही लोगों को समान अधिकार तथा सुखमय जीवन का अवसर प्राप्त होगा। इस प्रकार गाँधीजी का मानवाअधिकारवादी दर्शन कए समग्र दर्शन है। यह अहंवादी व्यक्ति के अधिकारों की वकालत नहीं करता वरन् कर्तव्यशील व्यक्ति की निष्ठा से उद्भूत दर्शन है। गाँधी का मानवाअधिकारवादी दर्शन परंपरागत, जातीय, धार्मिक स्वातंत्र्य, समानता, सर्वोदय समाजिक न्याय व जनसहभागिता वाली शासन व्यवस्था के द्वारा मानवाधिकार को सुलभ बनाने का प्रयास है।

गाँधी के अनुसार जब एक व्यक्ति का उत्थान होता है तो बहुतों के लिए अधिकार का सृजन करता है, जबकि एक व्यक्ति का नैतिक पतन बहुतों को उनके अधिकारों से वंचित करता है। वास्तव में गाँधी कर्तव्य पर बल देकर मानवाधिकार की प्राप्ति को संभव बनाते हैं। गाँधी का मानवाधिकारवादी दर्शन इस सत्य को स्थापित करता है कि यदि किसी व्यक्ति को मानवाधिकार अवधारित करना हो तो उसे अपने उन सभी कर्तव्यों का पालन करना होगा जिससे वे अधिकार निगमित होते हैं, तभी समाज में संघर्ष समाधान का मार्ग प्रशस्त होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

⇒ चन्द्रा विपिनः "कम्यूनलिज्म इन मॉर्डन इण्डिया", नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाऊस, (1984), पृ.सं. 169

⇒ मेहता एवं पटवर्धनः "दी कम्यूनल ट्राइंगल इन इण्डिया", इलाहाबाद, किताबिस्तान (1942), पृ.सं. 19

⇒ कोठारी रजनीः "कम्यूनलिज्म दी न्यू फेस ऑफ इण्डियन डेमोक्रेसी", दिल्ली, अजन्ता पब्लिकेशन, (1988), पृ.सं. 241–253

⇒ कृष्ण गोपालः "रिलीजन इन पॉलिटिक्स", दिल्ली एन.ए. पब्लिशर, (1981), पृ.सं. 29

⇒ श्रीनिवास एम.एन.: "आधुनिक भारत में जातिवाद" (भोपाल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, (1987), पृ. सं. 159

⇒ डी. स्मिथ विलफ्रेडः "मार्डन इस्लाम इन इण्डिया", लाहौर, पेंगविन बुक हाऊस, (1943), पृ.सं. 41

⇒ दीक्षित प्रभाः "साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ", बम्बई, मेकमिलन, (1980), पृ.सं. 41

⇒ आजाद मौलानाः "इण्डिया विन्स फ्रिडम", दिल्ली ओरियन्टलोंगमैन, प्रेस, (1958), पृ.सं. 131

⇒ माथुर, पी.सी.: "सोशियल बेस ऑफ इण्डियन पॉलिटिक्स", जयपुर, आलेख प्रकाशन, (1984)

⇒ वर्मा, एस.एल.: "प्रॉब्लम ऑफ मेजरिंग कम्यूनलिज्म इन इण्डिया"

⇒ माथुर, वाई.वी.: "मुस्लिम एण्ड चेन्जिंग इण्डिया", न्यू दिल्ली त्रिमूर्ति पब्लिशिंग, (1972)
⇒ महात्मा गाँधीः "दी वे टू कम्यूनल हारमनी", अहमदाबाद, कलेक्टेड वर्क दिल्ली, (1958)
⇒ जैन, एम.एस.: "आधुनिक भारत में मुस्लिम राजनीतिक विचारक", दिल्ली, मनोहर प्रकाशन, (1980), पृ.सं. 27
⇒ अवस्थी, डॉ. अमरेश्वरः "आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन", पृ.सं. 313
⇒ अन्सारी, एम.ए.: "मुस्लिम एण्ड दी कॉंग्रेस", दिल्ली विकास पब्लिशिंग, (1979)
⇒ इंजीनियर, अली असगरः "इस्लाम एण्ड इट्स रिलेवेंस टू आवर पेज", बम्बई इस्लामिक स्टैडिज, (1984)
⇒ सूरि सुरेन्द्रः "साइक्लोजी ऑफ कम्यूनोलीजी", टाइम्स ऑफ इण्डिया, (जून 13, 1984)
⇒ नायर कुलदीपः "साम्प्रदायिक दंगों की पुनरावृत्ति", राजस्थान पत्रिका, (नवम्बर, 5, 1982)
⇒ लुबरा बी.पी.: "रिलीजियस इम्पार्शलिटी", सेमिनार इलाहाबाद विश्वविद्यालय, (1967), पृ.सं. 20
⇒ श्री निवासन, एस.: "उपराष्ट्रवाद की उग्र अभिव्यक्ति", इण्डिया टूडे, (फरवरी 8, 2017)
⇒ डेका, कौशिकः "बीजेपी का हिन्दू सिरदर्द", इण्डिया टूडे, (मार्च 22, 2017)
⇒ मेनन के. अपरनाथः "दलित गौरव के नाम पर", इण्डिया टूडे, (मार्च 22, 2017)

❖◆❖